P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-8* (Part-1) November- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

रामनिवास मानव के काव्य में सांस्कृतिक मूल्य

अनीता रानी
शोधार्थी,
हिंदी विभाग,
गुरूकाशी विश्वविद्यालय,
तलवंडी साबो, बठिंडा

कविता चौधरी
सहायक प्राध्यापक,
हिंदी विभाग,
गुरूकाशी विश्वविद्यालय,
तलवंडी साबो, बठिंडा

सारांश

रामनिवास मानव के साहित्य में सांस्कृतिक मूल्य आलोच्य विषय के माध्यम से सांस्कृतिक मूल्य का विवेचन–विश्लेषण किया है। मनुष्य सदैव पारस्परिक संबंधो के आधार पर जीवन यात्रा संपंन करता है। जीवन क्रिया को सुसम्पादित करने के हेतु मनुष्य को विविध संपर्कों एवं संबंधों की आवश्यकता होती है जिससे वह पूर्णत्व प्राप्त कर सके। इसके लिए मनुष्य को मानव के सहयोग के साथ साथ सामाजिक सहयोग की अपेक्षा होती है। समाज से ही हमारी संस्कृति झलकती है।समाज की प्रथाएं, परम्पराएं, आर्थिक तथा सामाजिक गतिविधियाँ संस्कृति की ही देन होती है। संस्कृति ही समाज व्यवस्था को बचाए रखने के लिए मूल्यों का निर्धारण करती है।'मानव' का मन वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक परिदृष्य के कारण खिन्न हैं।

मुख्य शब्द : रामनिवास मानव, हिन्दी साहित्य।

प्रस्तावना

संसार में आज धर्म, आत्मा और परमात्मा विषयक जो भी चिन्तन, मनन एवं प्रवचन उपलब्ध है, उसका सर्वप्रथम प्रादुर्भाव भारत की तपोभूमि पर ही हुआ था। संस्कृति का सीधा संबंध मानवीय जीवन से है। मनुष्य मूल रूप से सामाजिक पशु है। मनुष्य को उसकी पशुता से ऊपर उठाकर देवत्व की कोटि तक पहुँचाने का नाम ही संस्कृति है। हमारे नैतिक मूल्य जो जीवन से जुड़े हुए हैं उनमें हमारी संस्कृति झलकती है। कदाचित यही कारण है कि संस्कृति और साहित्य दोनों में गहरा संबंध स्वीकार किया जाता है क्योकि दोनों ही जीवन का हित संपादन करते हैं। साहित्य सामाज का दर्पण है तो संस्कृति जीवन को प्रकाशित करती है इसलिए जहां जीवन में उत्तमता की बात आती है, वहां संस्कृति अनायास ही झलकती है। 'सम्' उपसर्ग पूर्व 'कृ' धातु से 'क्तिन' प्रत्यय लगाकर ''सुट'' का उपागम होने से संस्कृति शब्द का निर्विघ्न होता है। अष्टाध्यायी के अनुसार संस्कार को बनाने वाली वस्तु या जीव को संस्कृति कहते है।अपने काव्य में मानव–मूल्यों और सामाजिकता का पूर्ण निष्ठा, लगन और साहसपूर्ण ढंग से व्यक्त किया है। सम्पूर्ण काव्य में आम आदमी को केन्द्र मानकर उसे प्रतिस्थापित करने का सहारनीय प्रयास इन्होंने किया है। परिणाम स्वरूप इनका काव्य मानव–मात्र का हिताभिलाषी बनकर उसके साथ चलता है, उसे नित नये आयाम स्थापित करने के लिए प्रेरित करता हैं। डॉ0 'मानव' का मन वर्तमान राजनीतिक, सामाजिक परिदृष्य के कारण खिन्न है। वह एक सम्पूर्ण क्रांति की कामना करता है। तुष्टिकरण की नीतियां उसे प्रताड़ित करती हैं और वह व्यवस्था को पूरी तरह परिवर्तित करने की प्रेरणा देता हैं–

पक्ष धरे पाखंड का, झूठी करे दलील।
कल्चर को पंचर करे, वही तो प्रगतिशील।।

हमारी संस्कृति समाज में सामंजस्य उत्पन्न करती हैं। संस्कृति द्वारा ही समाज व्यवस्था की परम्परा बनी रहती हैं। इसके द्वारा एक पीढ़ी के समय की जीवन पद्धति का दूसरी पीढ़ी में संक्रमण होता है। संस्कृति से ही समाज की सरंचना का निर्धारण होता है। समाज की प्रथाएं, परम्पराएं, आर्थिक तथा सामाजिक गतिविधियाँ संस्कृति की ही देन होती है। संस्कृति ही समाज व्यवस्था को बचाए रखने के लिए मूल्यों का निर्धारण करती है। संस्कृति मानव–जीवन के लिए बड़ी उपयोगी है, क्योंकि व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति इसके बिना असंभव है। व्यक्ति और समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति परिस्थिति के अनुकूल करने में संस्कृति ही प्रबल कारक है। सामाजिक सम्बंधों एवं व्यवस्था को अच्छा बनाने के लिए यह बहुत उपयोगी है। संस्कृति सीखने योग्य गुण प्रदान करती हैं। सांस्कृतिक वातावरण में रहकर ही व्यक्ति अपना समाजीकरण करता है। अतः संस्कृति मानव को सदैव कुछ नयापन देते हुए प्रेरित करती रहती है।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोध कार्य का उद्देश्यमूल्यों के गिरते हुए स्तर को दिखाना है कि किस प्रकार आज का मनुष्य सांस्कृतिक मूल्य को भूलता जा रहा है।

संस्कृति संचयी होती है। जब एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी के नवीन तत्वों को संचारित करती है, तो उसमें सामाजिक गुण होते है। ये गुण ही सामाजिक व्यवस्था एवं सम्बन्ध को अच्छा बनाते हैं। पाश्चात्य संस्कृति की कुछ विशेषताओं को हम ग्रहण कर रहे है ताकि हमारी संस्कृति स्वयम् साधन न होकर साध्य बनती रहे । इसके अर्न्तगत आदर्श नियम, प्रतिमान सम्मिलित होते है, जिन पर समाज के प्रत्येक व्यक्ति को चलना आवश्यक होता है। न चलने की स्थिति में उसे अपराध समझकर दण्डित किया जाता है।

भौतिक भावों के अन्तर्द्वंद्व में विवेच्य काव्य में प्रायः मौलिक भाव तथा अन्य सहायक भावों का संघर्ष प्रासंगिक है, जिसमें अनेक स्थानों पर मौलिक भाव क्षीण होते हुए सशक्त सहायक भावों से संघर्षरत दिखाई देते हैं–

अनूठी ज्योति,
हैं सुख–दुःख दोनों
माणिक–मोती।
सुख–दुःख हैं,
केवल पर्यटक,
आये थे, गये।
जीवन क्रीड़ा
पल में मिले सुख,
पल में पीड़ा।[1]

आज के समाज में व्याप्त महत्व को सांस्कृतिक मूल्य कहा जाता है। आलोच्य विषय के माध्यम से इन्हीं सांस्कृतिक मूल्यों का विवेचन–विश्लेषण निम्नलिखित प्रकार से किया जा रहा है। विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक मानवीय नैतिक मूल्यों के कारण ही भारतीय संस्कृति विश्वविख्यात रही है, आज कई लेखकों ने भारतीय समाज में व्याप्त सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना के साथ–साथ मूल्यों के पत्तन पर भी चिन्ता व्यक्त की है।

अपनी गहरी–पैनी दृष्टि के कारण विसंगतियों के बीच जीते हुए, आम आदमी का दर्द कुलबुलाता–कसमसाता मिलेगा,मानव जी के काव्य में–

'किसी पंथ में,
मिला न पूर्ण सत्य
किसी ग्रन्थ में।
भ्रमित सारे,
क्या मन्दिर–मस्जिद,
क्या गुरूद्वारे।
रूद्व हैं कर्म,
ज्ञात नहीं है मर्म,
है कैसा धर्म।
धर्म बना है
अधर्म आज यहां
रक्तसना हैं।

मानव परिवार की लघु इकाई हैं। मानव के समूह से परिवार, परिवार के समूह से समाज के समूह से राष्ट्र, राष्ट्र के समूह से विश्व का अस्तित्व स्थापित होता है। जब मानव–मानव के संबंधों में कटुता या तनाव आता है तो अव्यवस्था का जन्म होता है। इसी अव्यवस्था के निर्मित कारणों को सांस्कृतिक मूल्यों का पत्तन कहा जा सकता है।

प्रत्येक धर्म–परम्परा में धर्म–ग्रन्थों का पठन–पाठन–स्वाध्याय–श्रवण इसलिए किया जाता है कि उनसे साध्य का, साधनों का ज्ञान भी होता है और जिन महापुरूषों व सत्पुरूषों ने धर्माचरण द्वारा अपना कल्याण किया है उनका प्रेरक पवित्र जीवन दर्पण की भांति हमारे सामने उपस्थित हो जाता है, जिससे धर्माचरण की क्रिया सुविधाजनक हो जाती है।इनके काव्य का दार्शनिक रूप भी बहुत प्रबल है। इनके प्रकृति की प्ररिवर्तनशीलता पर प्रकाश डालते हैं, तो जिजीविषा का भी सन्देश देते हैं–

'बना लेता है,
पत्थरों में भी राह,
बहता पानी।

ईश्वर की निकटता की इच्छा–पूर्ति के लिए भक्त दीन एवं विनयी होकर प्रभु की अनुनय विनय करता है, वह 'स्व' का विनाश करके अपने आराध्य में एकाकार होने का प्रयत्न करता है, अहम् के विनाश के पश्चात् ही भक्त एवं भगवान एकरूपता को प्राप्त होते हैं। 'मानव' का अपने वैयक्तिक प्रेम को सामाजिक भय एवं असफलता के कारण दमित करने का प्रयास करते हैं।

'नीति' का अर्थ उन बातों से है, जो लोक–व्यवहार में व आदर्श में समन्वय करती हुई व्यक्ति का हित–साध्न करे। प्राचीन नीति–परम्परा में वैदिक साहित्य में 'व्यवहार' तथा 'ले जाने वाली' अर्थ में इस शब्द का प्रयोग हुआ है। लौकिक संस्कृत तथा हिन्दी में इस शब्द का प्रयोग राजनीति, कूटनीति, उपाय, पॉलिसी, कार्यविधि, लोक–व्यवहार आदि अर्थों में मिलता है। इस प्रकार की बातों का जिस कविता में वर्णन हो, वह नीतिकाव्य है। डॉ. बालकृष्ण शर्मा 'अकिंचन' ने भी 'नीति' को व्यावहारिक सफलता के लिए ही काम्य माना है। वे लिखते है कि ''हम भी नीति को ऐसा ही मार्ग, रीति व कला समझते हैं जिसपर चलकर दैनिक जीवन में आदर्श सफलता प्राप्त की जा सके। आदर्श सफलता से आशय उस सफलता से है जो कौशल, चरित्र, अनुभव, योग्यता अथवा दूरदर्शिता के बल पर किसी समाज अथवा व्यक्ति को हानि पहुँचाए बिना प्राप्त की गई हो। अर्थात् 'नीति' के अर्थ में हमें आलौकिक, धर्मिक व आध्यात्मिक अर्थों की छाया नहीं देखनी चाहिए। कवि परिवेश, राजनीति, समाज, सत्ता और व्यवस्था में व्याप्त अमानवीयता, विसंगतियों, मूल्यहीनता, जड़ता, निशक्रियता, शड़यत्रों, सत्ता की अधिनायकवादी वृत्ति से उत्पन्न पीड़ा। इनकी आस्था का आधार हैं जिजीविशा, मानवीय प्रेम और पारस्परिक सहयोग। तभी तो यह त्रासद परिस्थितियों के बीच भी हिम्मत और मस्ती के गीत गाते हैं–

'अमृत पीकर अमर हुए, कहलाये वे देव।
लेकिन जिसने विश पिया, हुआ वह महादेव।।
मीरा से सुकरात तक, सबकी टेक समान।

जिसने जितना विश पिया, उतना हुआ महान।।[2]

वह एक समाज–यवस्था के नियमन व संयमन के लिए गढ़ी गई आचारसंहिता ; कोड ऑफ एथिक्स है जिससे समाज के विभिन्न वर्गों के बीच समन्वय कर समाज को वि शृंखल न होने दिया जाए। अतः नीति के ऐतिहासिक–सामाजिक विकास क्रम को भी दृष्टि में रखना अपरिहार्य होगा। भारतीय नीति–शास्त्रा के विकास की कहानी भी इसी दिशा की ओर इंगित करती है।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि व्यक्ति का सांस्कृतिक विकास भी सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है। भारतीय काव्य परम्परा में वैयक्तिक मूल्यों के द्वारा व्यक्ति के चरित्र को उँचा बनाना हमेशा ही कवियों का लक्ष्य रहा है। इनके सम्पूर्ण काव्य का लक्ष्य ही व्यक्ति की सौन्दर्याभिरुचि में वृद्धि करता है और नीतिकविता का तो लक्ष्य ही व्यक्ति के हित अहित में अन्तर बताकर व्यक्ति का समाजोन्मुखी चारित्रिक विकास करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *माथुर एस. एस.–शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार, पृ.171*
2. *अगरवालपब्लिकेशन्स हैड ऑफिस : 28/115, आगरा*
3. *मानवरामनिवास–'सहमी सहमी आग', पृ0 25*
4. *अमित प्रकाशन के.बी. 97, कविनगर, गाज़ियाबाद 201002*
5. *मानव रामनिवास–'मेहंदी रचे हाथ', पृ0 78–79*
6. *अक्षरधाम प्रकाशन डी. सी. निवास के सामने, करनाल रोड, कैथल–136027, हरियाणा*
7. *मानव'रामनिवास–'मेहंदी रचे हाथ', पृ0 16*
8. *अक्षरधाम प्रकाशन डी. सी. निवास के सामने, करनाल रोड, कैथल–136027, हरियाणा*
9. *मानवरामनिवास–'मेहंदी रचे हाथ', पृ0 13*
10. *अक्षरधाम प्रकाशन डी. सी. निवास के सामने, करनाल रोड, कैथल–136027, हरियाणा*
11. *सहगलमनमोहन सहगल– गुरू ग्रंथ साहिबः एक सांस्कृतिक सर्वेक्षण, पृ.75,77*
12. *भाषा विभाग, पंजाब पटियाला, 1971*